Volume: 4 Issue: 9 Pages: 198-200

# राष्ट्र निर्माण में स्वदेशी मुहिम की सार्थकता

*[1] मिस्टर दीपक

*[1] शोधार्थी, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, दिल्ली, भारत।

**Article Info.**
**E-ISSN: 2583-6528**
**Impact Factor (SJIF): 6.876**
**Peer Reviewed Journal**
**Available online:**
**www.alladvancejournal.com**

**Received:** 20/Aug/2025
**Accepted:** 26/Sep/2025

***Corresponding Author**
**मिस्टर दीपक**
शोधार्थी, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, दिल्ली, भारत।

**सारांश**
प्रस्तुत शोध का उद्देश्य उपभोक्तावादी तथा वैश्वीकृत दौर में प्रसारित विकास तथा आधुनिकीकृत उपभोक्ता सशक्तिकरण का वास्तविकता के धरातल पर परीक्षण का है, इस विषय पर दृष्टिपात करते हुए, कि क्या गैर आत्मनिर्भरता की स्थिति में उदारीकरण की नीति के द्वारा निर्मित नियमों के आधार पर बड़ी अर्थ व्यवस्थाओं द्वारा निर्मित उत्पादों का उपभोग कर आधुनीकीकृत एवं सशक्त हुआ जा सकता है, अथवा यह राष्ट्रिय विकास की दृष्टि से एक अवरोध है।

**मुख्य शब्द:** वैश्वीकरण, उदारीकरण, उपभोक्तावाद, स्वदेशी-मुहिम, आत्म-निर्भता, सशक्तिकरण

**प्रस्तावना:**
मूल्यांकन प्रगतिशीलता की वह आधारभूत निर्देशात्मक इकाई है, जिसके बिना अनंत भटकाव उत्पन्न हो सकता है, मूल्यांकन के आभाव में गतिशीलता तो होती है, परन्तु लक्ष्यहीनता उसका सतत् अवमूल्य कर एक गहन भटकाव अथवा गफलत की स्थिति निर्मित करती है। इसी संदर्भ में व्यक्तिक प्रगति से लेकर राष्ट्रिय उन्नति हेतु मूल्यांकन अत्यंत महत्वपूर्ण है। वैश्विक परिदृश्य विगत कुछ दशकों में अभूतपूर्व गति से बदला है, जिसके अनेक कारण हैं, लेकिन इस आधारभूत परिवर्तन की आधारभूमि मुख्यत: निर्मित की उदारीकरण की नीति ने, जिसके परिणाम स्वरूप तकनीकी प्रगति के कारण वैश्वीकरण की भूमिका निर्मित हुई तथा कालंतर में बाजारवाद तथा उपभोक्तावाद का सृजन हुआ।उदारीकरण तथा भूमंडलीकरण की पीठ पर सवार होकर जैसे ही बाजारवाद ने विभिन्न राष्ट्रों की सीमाओं को पार किया वैसे ही अत्यंत रणनीतिक रूप से बाजारवाद ने अपनी एक और शाखा उपभोक्तावाद का निर्माण किया। जो कि विशिष्ठ बाजारवादी उद्देश्यों की प्रतिष्ठा का वाहक जान पड़ता है।यद्यपि औद्योगिक क्रांति रूपी क्षमता की प्राप्ति के परिणाम स्वरूप तथा तकनीकी क्रांति के योग से वैश्विक सहयोग तथा मानवता के उद्धार की भावना की पृष्ठभूमि में वैश्विक स्तर की मजबूत अर्थव्यवस्थाओं ने उदारीकरण को प्रचारित एवं प्रसारित किया, जिसमें मुक्त व्यापार की नीति को प्रोत्साहित किया गया, जिसका आधार आपसी सहयोग तथा साझा आर्थिक क्रांति की अवधारणा को बताया गया। हाँलाकि उस भूमंडलीकृत व्यवस्था का मूल्यांकन करने पर इसके अंतर्निहित उद्देश्यों को समझा जा सकता है। अगर पूर्व की अपेक्षा भूमंडलीकृत व्यवस्था का अवलोकन करें तो यह भी स्पष्ट होता है कि वैश्विक स्तर पर इसने उपभोक्ताओं को सशक्त करने का कार्य किया, उन्हें उपभोग संदर्भित अधिक विकल्पों के सृजन में सहायता की, लेकिन भूमंडलीकरण के कोख से उत्पन्न बाजारवाद ने उपभोक्तावादी दृष्टि के प्रसार द्वारा उपभोग की जो आधारभूत धारणा एवं प्रवृत्ति थी, उसे ही बदल दिया। क्योंकि "यह जीवन के हर कोने, अस्तित्व के हर रूप का वस्तुकरण करता है। बाजार में उसकी कीमत निर्धारित करता है, तथा दुनिया के बाज़ार में उसकी खरीद-बिक्री करता है। कल तक जो प्राकृतिक संसाधन, गरीब से गरीब व्यक्ति को उपलब्ध थे, मसलन- खुली हवा में वह साँस ले पाता था, नदी, झरने और सरोवर के स्वच्छ पानी से वह अपनी प्यास बुझाता था, हजारों साल से जिस बीज की वजह से वह खेतों में अन्न उगाता था, आज उसी प्राकृतिक संपदा का भूमंडलीकरण के नाम पर निजीकरण होता जा रहा है।" [1]
इसी प्रक्रिया के अंतर्गत बाजारवाद के प्रसार की दृष्टि से भूमंडलीकरण ने उपभोक्तावादी जो मुहिम चालाई उसने विपणन की वृद्धि हेतु नैतिकता की सभी धारणाओं को शंसय के घेरे में खड़ा कर

दिया, उपभोक्तावादी दृष्टि ने जहाँ एक ओर अधिकतम मुनाफा कमाने के उद्देश्य से उपभोक्ता व्यव्हार में परिवर्तन करते हुए जरूरत आधारित उपभोग वृत्ति को प्रदर्शन आधारित उपभोग वृत्ति में बदलने का कार्य किया वहीं, दूसरी ओर प्रचार तंत्र तथा विज्ञापन के बलबूते ब्रांड आधारित सतत् उपभोग की वृत्ति को उच्च स्तरीय जीवन के प्रतिमान के रूप में स्थापित किया।

इसके साथ ही उपभोक्तावाद ने उपयोगितावाद के प्रोत्साहन द्वारा अवसरवादी प्रवृत्ति के विकास को हवा दी, जिससे समाजिक बिखराव तो हुआ ही, साथ ही मानवीय मूल्यों के ह्रास द्वारा सह-अस्तित्व की धारणा भी जटिल होती गई। बहु-राष्ट्रिय कंपनियों ने उपभोक्तावाद के मायावी संसार में अन्य देशों के लोगों को सुविधा तथा उपभोग विकल्पों के प्रस्तुतीकरण के माध्यम से ऐसा उलझाया की उपभोक्ता उपयोगिता के चक्कर में, अपनी राष्ट्रिय उत्पादन क्षमता तथा आधारभूत आवश्यकताओं में स्वावलंबन की चिंतना से विस्तृत ही हो गया, यद्यपि वर्तमान उपभोक्तावादी दौर के इस विशाल उपभोक्ता वर्ग को जितनी जल्दी इस बाजारवादी व्यवस्था द्वारा निर्मित हवा- हवाई उपभोग सशक्तिकरण की सच्चाई का ज्ञान हो सके उतना ही उनके तथा उनके राष्ट्र के लिए उचित होगा,क्योंकि ये बाजारवादी व्यवस्था उन्हें अपनी आधारभूत आवश्यकताओं के संदर्भ में भी दूसरों पर निर्भर बना रही है, साथ ही अत्यंत रणनीतिक रूप से बहु-राष्ट्रीय कंपनियां बाजार आधारित प्रतियोगिता का प्रतिमान इतना जटिल बना देती हैं, कि कमजोर अर्थ-व्यवस्था वाले राष्ट्र उनसे तुलनात्मक रूप से प्रतिस्पर्धा कर ही नही पाते। परिणाम स्वरूप वे आधारभूत जरूरतों के संदर्भ में भी सशक्त नहीं हो पाते और यह सब अनायास नहीं होता, यह बड़ी अर्थ- व्यवस्थाओं की वो रणनीतियाँ हैं, जिसे उन्होंने उदारीकरण के बहाने योजनाबद्ध तरीके से क्रियान्वित किया।

इस संदर्भ में अगर विभिन्न स्वदेशी मुहिमों को देखा जाए तो इन्हें, राष्ट्रिय पुनरुत्थान के रूप में देखा जा सकता है। जिसका जोर स्वावलंबन पर होता है, राष्ट्रिय विकास पर होता है। जिसके माध्यम से एक उपभोक्ता बाजार रूपी राष्ट्र को वैश्विक विनिर्माण केन्द्र के में परिवर्तित किया जा सकता है। इसके साथ ही स्वदेशी मुहिम सतत् विकास तथा आर्थिक संप्रभुता की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि स्वदेशी मुहिमों की अनुपस्थिति में कोई भी राष्ट्र जाने-अनजाने पूर्णतः बाहरी ताकतों पर निर्भर हो जाएगा। जो राष्ट्रिय सुरक्षा, अर्थव्यवस्था और साथ ही समाज पर अत्यंत नकारात्मक प्रभावों का आरोपण कर सकता है, इस प्रकार विस्तृत अर्थों में स्वदेशी को आजादी के आधार के रूप में देखा जा सकता है। क्योंकि उदारीकरण के मुहिम के अंतर्गत स्वदेशी व्यवस्था के अभाव में "तीसरी दुनिया के समाज पहले की ही तरह आर्थिक और राजनीतिक भूमंडलीकरण से होने वाले नुकसानों को झेलने के लिए अभिशप्त बने रहेंगे। बदले हुए संदर्भ में उनके लिए गुंजाइशें और भी कम हो जाएँगी। इन समाजों के सामने जो विकल्प रहे हैं उनमें भूमंडलीकरण की प्रक्रिया से अलग हो जाने का विकल्प कभी शामिल नहीं था, इस हिसाब से खुद को भूमंडलीकरण के अनुकूल ढालने के अलावा उनके सामने कोई चारा ही नहीं है।" [2] और वैसे भी उदारीकरण की पृष्ठभूमि को वैश्विक आर्थिक शक्तियों ने इस प्रकार निर्मित किया है, कि बाहर से तो वह जन कल्याण,आर्थिक क्रांति तथा साझा विकास की मिशाल प्रतीत होता है, लेकिन गहन अवलोकन द्वारा उसके भी अंतर्निहित स्वार्थों को समझा जा सकता है, कि कैसे उदारीकरण के अंतर्गत बड़ी अर्थ व्यवस्थाएं छोटी अर्थव्यवस्था वाले राष्ट्रों के बाजारों पर प्रभुत्व जमा उन्हें उपभोग विकल्प प्रदान कर चयन की दृष्टि से समर्थ तो बनाती हैं,लेकिन उन्हें हर प्रकार से अपने आधारिक और औद्योगिक क्षमता के विकास से रोकने का कार्य करती हैं।बड़ी अर्थ व्यवस्थाऐं यद्यपि किफायती दरों पर वस्तुओं और सेवाओं की उपलब्धता तो सुनिश्चित करा देती हैं, परन्तु इन्ही किफायती दरों के आधार पर वह छोटी अर्थ-व्यवस्थाओं को उत्पादन क्षमता के विकास से वंचित करने का कार्य करती हैं। बड़ी अर्थव्यवस्थाएं यद्यपि छोटी अर्थ-व्यवस्थाओं के समक्ष कड़ी प्रतियोगी परिस्थितियों का निर्माण करती हैं, जिसके कारण वे उत्पादन क्षमता के निर्माण की दृष्टि से निरंतर पिछड़ते चले जाते है। "सवाल उठता है कि विश्व बैंक और अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष ने ढांचागत समायोजन नीति को क्यों लागू करना चाहा था? इसका प्रमुख कारण है, यदि स्थानीय उत्पादन से स्थानीय समुदाय की जरूरत पूरी हो जाती हैं और जिसे लघु स्तर पर पूरा करना संभव है तो इन देशों में बहुराष्ट्रीय कंपनियों की क्या भूमिका बचेगी? इन्हें कौन चाहेगा? भूमंडलीकरण के नाम पर आर्थिक सक्रियता का अर्थ ही हुआ समन्दर पार की आवाजाही, आयात-निर्यात के द्वारा की जाने वाली निरंतर सौदेबाजी। इससे जितना व्यापार विनिमय बढ़ता है, उतना ही बहुराष्ट्रीय निगमों को फायदा पहुंचता है।" [3] इस प्रकार देखा जाए तो वैश्विक आर्थिक शक्तियाँ बड़े रणनीतिक रूप से अपने हितों की पूर्ति हेतु उदारीकरण की आड़ में ऐसी रणनीतियों के तहत वैश्वीक बाजार में प्रवेश करती हैं, जिससे वह उन बाजारों में अपने एकाधिकार को स्थापित कर सके।

यद्यपि राष्ट्रिय विकास की दृष्टि से जब हम उदारीकरण का मूल्यांकन करते हैं, तो यह स्पष्ट हो जाता है, कि राष्ट्रिय विकास उपभोग क्षमता की वृद्धि से नहीं बल्कि उत्पादन क्षमता के विकास द्वारा ही संभव है, क्योंकि उदारीकरण की आड़ में बहुराष्ट्रिय कंपनियाँ उपयोग की वृत्तियों को तो प्रोत्साहित करती हैं, परंतु वह उत्पादन संबंधी आधारिक संरचना के निर्माण को हतोत्साहित करती हैं। क्योंकि उन्हें पता है, कि छोटी अर्थ व्यवस्थाओं को आधारभूत आवश्यकताओं हेतु आश्रित करने के लिए आधारभूत उत्पादन क्षमता के विकास को रोकना ही सर्वाधिक उपयुक्त रणनीति है।

और सबसे बड़ी "विडम्बना तो यह है कि भूमंडलीय निगमों के सशक्त होते ही राष्ट्रिय सरकारें उन बाहरी ताकतों पर निर्भर करने लगती हैं तथा उन नियमों के अधीन हो जाती हैं जो उन्होंने नहीं बनाए।" [4] इस संदर्भ में स्वदेशी मुहिम राष्ट्र निर्माण तथा सशक्तिकरण की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि इस उदारीकरण के दौर में जब बहु-राष्ट्रिय निगमें हर वो प्रयास कर रही हैं, जिससे वे विपणन अधिक्य द्वारा किसी भी देश को अपने आधीन अथवा अपने पर निर्भर कर सकें। वहीँ स्वदेशी मुहिम आयात की निर्भता में न्यूनता को सुनिश्चित कर आत्मनिर्भरता को प्रोत्साहित करती है। जिसका लाभ किसी भी राष्ट्र को हर परिस्थिति में निरंतर प्राप्त होता रहता है। जैसे अगर हालिया संदर्भों में आयात पर अधिक निर्भरता के दुष्परिणामों को देखा जाए तो बात स्वतः ही स्पष्ट हो जाएगी, एक ओर तो उदारीकरण वैश्वीक अर्थव्यवस्थाओं को आपस में जोड़ती है, एक दूसरे पर कम या अधिक मात्रा में निर्भर बनाती है जो सामान्य परिस्थियों में तो उपभोग की दृष्टि से उपयोगी हो सकते हैं, परन्तु वैश्विक महामारी तथा युद्ध जैसी परिस्थियों में अत्यधिक आयात निर्भरता गंभीर समस्याओं तथा संकटो को प्रादुर्भावित करती है। और वर्तमान परिदृश्य में जो भी युद्ध संबंधी परिस्थितियाँ उत्पन्न हुई हैं, उनके मूल में उपभोग आधारित जरूरतों के संबंध में अधिक निर्भरता को आधार बनाकर राष्ट्रों को दबाव में लाने का प्रयास किया गया है, इसका एक ज्वलंत उदाहरण हम अमेरीका, ईरान तथा इसराइल युद्ध से उत्पन्न परिणाम के रूप में देख सकते हैं, कि कैसे ऊर्जा जरूरतों के संबंध में वैश्वीक निर्भरता को स्ट्रेट ऑफ हर्मुज पर आक्रमण कर बाधित किया गया, जिसके परिणाम स्वरूप ऊर्जा संबंधी निर्भरता ने गंभीर समस्याओं को जन्म दिया, क्योंकि आयात वेशक जरूरतों की पूर्ति की दृष्टि से महत्वपूर्ण जान पड़ता हो, पर सच तो यह है, कि अत्यधिक निर्भरता, गुलामी तथा शोषण एवं दमन को जन्म देती है। इस प्रकार अगर कोई भी राष्ट्र उन्नत्ति करना चाहता है, तो उसे केवल उपभोक्ता व ग्राहक बनने की अपेक्षा 'अपने उत्पादन की क्षमता के विकास पर कार्य करना चाहिए। जिससे जटिल परिस्थितियों में कृत्रिम अथवा नैसर्गिक रूप से जब आपूर्ति श्रृंखला बाधित हो, तो वह अत्यधिक गंभीर समस्याओं का कारण न

बने क्योंकि यही वह क्षमता है, जो किसी भी राष्ट्र को विदेशी ताकतों पर अत्यधिक निर्भरता से उबार कर उसे आत्म–सशक्तिकरण की ओर ले जाती है।इसके साथ ही इसका दूसरा सबसे महत्वपूर्ण पहलू है, उसके द्वारा वैश्विक स्तर पर आपूर्ति श्रृंखला में सहयोगात्मक वृद्धि विस्तार से, क्योंकि बिना स्वदेशी मुहिम तथा आधारभूत उत्पादन क्षमता के विकास के उपभोग वृत्ति तो बढ़ती है, परन्तु वह राष्ट्रिय उन्नति की दृष्टि से कारगर सिद्ध नहीं हो पाती। वैश्विक आपूर्ति श्रृंखला में सशक्त होना, व्यापारिक समृद्धि तथा वर्चस्व की स्थापना हेतु अत्यंद आवश्यक एवं महत्वपूर्ण है।

इसके साथ ही स्वदेशी मुहिम की एक और सबसे प्रमुख विशेषता है, कि यह स्थानीय उद्योग, धंधों को न केवल संरक्षण प्रदान करती है, बल्कि आधारभूत उत्पादन क्षमता के सृजन हेतु भी प्रोत्साहन का कार्य करती है। जिसके द्वारा उपभोग सक्तिकरण के साथ-साथ नवीन रोजगारों का सृजन भी होता है। जिसके परिणाम स्वरूप आदर्श व्यापारिक वातावरण का निर्माण होता है, जिसके कारण विदेशी निवेश की आधार भूमि तैयार होती है। जो राष्ट्रिय आर्थिक विकास की दृष्टि से अत्यंत आवश्यक एवं महत्वपूर्ण है। स्वदेशी मुहिम किसी भी राष्ट्र की आर्थिक स्वतंत्रता तथा सशक्तिकरण की दिशा में एक अत्यंत सकारात्मक कदम है, क्योंकि उसके आभाव में बाहरी ताकतें हमें हमारी जरूरतों की आपूर्तिकर्ता के आधार पर निर्भर बनाती हैं, तथा उसके पश्चात् अपने अजेंडे के अनुरूप नियमों को थोपकर वह किसी भी राष्ट्र पर आर्थिक साम्राज्यवाद के आधार पर नियंत्रण करने का प्रयास करती हैं।

इस कारण अगर कोई राष्ट्र स्वदेशी मुहिम के प्रति सजग नहीं रहता तो इसके परिणाम स्वरूप वहाँ स्थानीय उद्योग तथा धंधों का विकास तो होता नहीं बल्कि वे क्रमशः नष्ट होते चले जाते हैं। और विदेशी ताकतें निरंतर कई प्रकार से साम्राज्यवाद के विस्तार हेतु प्रयासरत हैं, जिसमें से वे आर्थिक दृष्टि से किसी दूसरे के विकास को अवरुद्ध कर उस पर हावी होने का प्रयास करती हैं। इस दृष्टि से बड़ी अर्थ-व्यवस्थाएं छोटी अर्थ यवस्थाओं के बाजार पर अपना नियंत्रण करने की दृष्टि से हर वो प्रयास करती हैं, जिससे स्थानीय उद्योग, धंथों तथा मुलभूत आधारिक संरचनाओं के विकास को अवरुद्ध किया जा सके। इस दृष्टि से राष्ट्रिय संसाधनों के पूर्ण उपयोग एवं विकास की दृष्टि से भी स्वदेशी मुहिम अत्यंत आवश्यक है जिसके उदाहरण स्वरूप वर्तमान में बहुराष्ट्रिय कंपनियों की कार्य विधि द्वारा समझा जा सकता है। बहु राष्ट्रिय निगम अधिकाधिक लाभार्जन की दृष्टि से अपने उत्पादों का निर्माण ऐसे देशों में कर रही हैं, जहाँ श्रम सस्ता हो, यातायात की अच्छी सुविधा हो तथा कच्चे माल की उपलब्धता हो, अगर इन सभी अवसरों, सुविधाओं का उपयोग कर, कोई राष्ट्र अपने स्थानीय बाजार का विकास करे तो वह आर्थिक दृष्टि से सशक्तिकरण को प्राप्त करेगा।

## निष्कर्ष:

अत: उपभोक्तावादी दौर के मूल्यांकन से यह स्पष्ट होता है, कि अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु दूसरों पर अधिक निर्भरता जटिल परिस्थितियों का निर्माण करती है। अवांछित नियमों तले किसी भी राष्ट्र को दबाती है, हालांकि यह उपभोक्तावादी बाजार की रणनीति का हिस्सा है, कि राष्ट्रों को आर्थिक दृष्टि से आत्म निर्भर होने से रोका जाय इस प्रकार राष्ट्रिय सशक्तिकरण की दृष्टि से स्वदेशी मुहिम अत्यंत महत्वपूर्ण एवं उपयोगी मानी जाती

## संदर्भ सूची:

1. खेतान प्रभा,बाजार के बीच: बाजार के खिलाफ,, पृष्ठ संख्या-32
2. कुमार दुबे अभय,भारत का भूमंडलीकरण,पृष्ठ संख्या-107
3. खेतान प्रभा,बाजार के बीच:बाजार के खिलाफ, पृष्ठ संख्या-35
4. खेतान प्रभा,बाजार के बीच:बाजार के खिलाफ, पृष्ठ संख्या-35